प्रथम अध्याय

कवीन्द्र परमानन्द - व्यक्तित्व एवं कृतित्व ।

प्रथम-अध्याय

कवि परिचय-व्यक्तित्व एवं कृतित्व

पण्डितराजजगन्नाथ के साथ संस्कृत कवि-परम्परा प्रायः समाप्त हो जाती है यह कहा जाता है । विद्वानों की भी यही धारणा है । संस्कृत साहित्य के इतिहास में भी जगन्नाथोत्तर साहित्य की चर्चा नाममात्र को ही पाई जाती है। कृष्णम्माचारी के अतिविस्तृत इतिहास में भी जगन्नाथोत्तर कवियों का तथा उनकी कृतियों का उल्लेख मात्र पाया जाता है । परन्तु उपर्युक्त विधान अर्थवाद के रूप में जगन्नाथ पण्डितराज की प्रशंसा में ही लिया जा सकता है । 'भामिनी विलास' 'गंगालहरी' जैसे प्रौढ़ सरस काव्य एवं 'रसगंगाधर' जैसा स्वरचित उदाहरणों से सुशोभित प्रचण्ड साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थ पण्डितराज की श्रेष्ठता के अकाट्य प्रमाण हैं । परन्तु पण्डितराज के समय में तथा बाद में भी संस्कृत काव्य-सरिता अखण्ड रूप से बहती रही है । खोज करने पर उसमें अनेक सुन्दर रत्न प्राप्त किये जा सकते हैं । ऐसा ही एक रत्न 'शिवभारत' संस्कृत विश्व के सामने प्रस्तुत करने का यह प्रयास है । कहा जाता है -

"विनाश्रयं न शोभन्ते पण्डिता वनिता लता: ।"

पण्डितराज जगन्नाथ के उत्तर काल में पण्डितों का (जिनमें कवि परमानन्द भी आते हैं) राजाश्रय दिल्ली दरबार में समाप्त हो गया था, जिसके कारण संस्कृत काव्य का ह्रास हो गया । आधुनिक युग में मुद्रण कला के प्रचार से कवियों को जनता का आश्रय प्राप्त हुआ है । इसीलिए आज राजाश्रय का महत्व नहीं रहा है । परन्तु मुद्रणकला के अभाव में राजाश्रय का अत्यधिक महत्व था । संस्कृत साहित्य राजश्रय में ही पनपा है। आलमगीर औरंगजेब को कलाओं में तथा साहित्य में कोई रुचि नहीं थी । अकबर के

काल से दरबार को सुशोभित करने वाले नवरत्न उसने हटा दिए थे । पण्डितराज जगन्नाथ ने कहा था -

"दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा मनोरथान पूरयितुं समर्थ: ।
अन्यैर्नृपालै: परिदीयमानं शाकाय वा स्याल्लवणाय वा स्यात् ।"

शाहजहाँ के बाद कवियों पर शाकलवण पर ही गुजारा करने की आपत्ति आ पड़ी । कवियों को छोटे-मोटे राजसरदारों के आश्रय में ही जाना पड़ा । जयसिंह, जसवंत सिंह जैसे माण्डलिक राजाओं के दरबार में अनेक संस्कृत पण्डितों को तथा कवियों को आश्रय मिला था । इनके प्रकाशित तथा अप्रकाशित ग्रन्थ आज भी पाये जा सकते हैं । इसी समय दक्षिण में शिवाजी का उदय हुआ । शिवाजी ने संस्कृत को राजभाषा की मान्यता प्रदान की । इनके आश्रय में अनेक संस्कृत पण्डित थे, जिनके द्वारा शिवाजी ने राजव्यवहारकोश, धर्मशास्त्र पर नई स्मृति, तथा अन्य अनेक ग्रन्थों की रचना करवाई । कवीन्द्र-पदवीविभूषित परमानन्द को शिवाजी ने ही अपने चरित्र पर काव्य लिखने का आदेश दिया था । इसी का कुछ अंश शिवभारत नाम से प्रकाशित हो चुका है ।

कवीन्द्र परमानन्द भट्टगोविन्द का पुत्र[1] तथा अहमदनगर के जिले के नेवासा नामक स्थान का निवासी, काश्यपगोत्र का ब्राह्मण[2] था । इसकी कुलदेवता एकवीरा देवी है जिसकी कृपा से कवि ने वाणी के वैभव को प्राप्त किया ।[3]

---

1. पौराणिकानां प्रवरं भट्टगोविन्दनन्दनम् ।
   ....॥ 6

2. शिवभारत, अध्याय 1, श्लो0 16, पृ0 1

3. ....
   एकवीरा प्रसादेन लब्धवाक् सिद्धि वैभवम् ॥
   अ0 1, श्लो0 6, पृ0 1

   एकवीरां भगवतीं । प्रणिपत्य ।
   अ0 1, श्लो0 22, पृ0 2

   कृपालु: कुलदेवता । चतुर्भुजा भगवती ।
   अ0 1, श्लो0 32, पृ0 2

कवीन्द्र परमानन्द महानशास्त्रज्ञ, अध्यात्मवेत्ता, व पौराणिक प्रवर अर्थात् मार्मिक पौराणिक पण्डित था ।[1]

कवि ने बनारस में रहते हुए अपना अध्ययन अध्यापन कार्य सम्पन्न किया । बनारस से वह शाह जी के दरबार में (सम्भवतः बंगलोर में) आया, तत्पश्चात् रायगढ़, जहाँ शिवाजी ने अपने स्वराज्य की पहली राजधानी स्थापित की थी, के लिए प्रस्थान किया ।

शक 1586 से पहले ही परमानन्द एक महान कवि के रूप में प्रसिद्ध हो चुका था । इसी वर्ष राजपुर में धर्मनिर्णयार्थ एक महान सभा हुई थी । इस सभा में अन्य पण्डितों के साथ परमानन्द का नामोल्लेख प्राप्त होता है ।[2] जिसमें कवीन्द्र की गणना गागाभट्टादि शिवसमकालीन काशीस्थ पण्डितों में की है । इसके अतिरिक्त शक 1596 में गागाभट्टादि ने शिवाजी के राज्याभिषेक समारोह को सुशोभित किया था । यह बात इतिहास प्रसिद्ध है । इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि कवि शिवसमकालीन था ।

---

1. तं वै पद्मासनासीनं विस्फुरद्ब्रह्मवर्चसं ।
   वेत्तारं सर्वशास्त्राणां वित्तमध्यात्मवित्तमम् ॥
   पौराणिकानां प्रवरं भट्टगोविन्दनन्दनम् ।
   ....॥
   अध्याय 1, श्लो० 5,6, पृ० 1
2. अत्र सभायां स्थिताः पण्डिताः ।
   गागाभट्टस्त्वनूचानो निगमागमवित्तमः ।
   सभायां शुशुभे राज्ञः सुधर्मायां यथागुरुः ॥[1]
   दीक्षितः शितिकण्ठश्च रघुनाथो बुधाधिपः ।
   कवीन्द्रः परमानन्दो महादेवश्च पण्डितः ॥[2]
   प्रभाकर उपाध्यायस्तथा श्रीरंगशास्त्रिणः ।

कवीन्द्र परमानन्द शिवाजी के दरबारी कवि थे तभी तो ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही शिववरित्र को सुनने के लिए उत्सुक पण्डितों ने :

"यः शास्ति वसुधामेतां राजा राजगिरोश्वरः ।"

अर्थात् जो रायगढ़ का स्वामी इस पृथ्वी पर शासन करता है उसका चरित्र आपने [कवि ने] अनेक अध्यायों में रचा है वह हमें बताओ इस प्रकार की विनती कवीन्द्र से की है । ये श्लोक कवीन्द्र व महाराज शिवाजी की काल एकता को दिखाने वाले हैं । यदि कवीन्द्र समकालीन नहीं होते तो रायगढ़ का स्वामी राज्य कर रहा था ऐसा कहा होता ।

चरित्र लेखन का काम स्वयं शिवाजी महाराज ने ही परमान्नद को सोंपा था ये बताते हुए कवि कहता है :

.....।
स एकदात्मनिष्ठं मां प्रसायेदमभाषत ।। 25
यानि-यानि चरित्राणि विहितानि मया भुवि ।
विधीयन्तेच सुमते तानि सर्वाणि वर्णय ।। 26
मालभूमुपकृम्य प्रथितं मत्पितामहम् ।
कथामेतां महाभाग महनीयां निरूपय ।। 27[1]
इसमें 'यानि चरित्राणि विहितानि विधीयन्ते च ।'

इस पद से यह सिद्ध होता है कि चरित्रलेखन का कार्य निरन्तर चल रहा था अर्थात् ग्रन्थकार शिवाजी राजा के जीवन में घटित घटनाओं या जो-जो इतिहासचरित्र करता था, उन-उनको लिखता था तथा यह चरित्र लिखने के लिए स्वयं शिवाजी ने ही परमानन्द को आज्ञा दी थी । यह बात चरित्रकार व चरित्रनायक दोनों की समकालीनता को पूर्ण रूप से स्थापित करती है अर्थात् इन बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि शिवाजी महाराज का समकालीन था ।

---

1. शिवभारत, अध्याय 1, पृ0 2

इस ग्रन्थ में केवल दो घटनायें ऐसी हैं जो समय को बताती हैं इनमें पहली शिवाजी का जन्म और दूसरी अफज़लखान का वध और ये दोनों एक दम सत्य हैं। इस ग्रन्थ में कथानकों के प्रसंग को अत्यधिक सूक्ष्मता से देखने पर भी यही सिद्ध होता है कि कवि शिवाजी का समकालीन था।

शिवाजी महाराज के समय में लिखे हुए ग्रन्थों में शिवाजी को विष्णु का अवतार बताया गया है। शिवभारत में भी शिवाजी को विष्णु का अवतार कहा गया है। इसके अतिरिक्त जयरामकृत पर्णालपर्वतग्रहणाख्यान, रघुनाथ पण्डित कृत राज्यव्यवहारकोश तथा संभा जी पुत्र द्वारा रचित बुधभूषण ग्रन्थ इत्यादि शिवाजी के समकालीन ग्रन्थों में उनको विष्णु का अवतार ही बताया गया है। परन्तु महाराज के बाद रचित ग्रन्थों में उनको कहीं पर भी विष्णु का अवतार नहीं कहा गया, बल्कि शिवाजी 'शंकर का अवतार थे' इस प्रकार की कल्पना की गई है। 'सप्तप्रकरणात्मक चरित्र' 'शिवदिग्विजय' इत्यादि अनेक ग्रन्थ इस बात के साक्षी हैं जिनमें शिवाजी को शंकर का अवतार कहा गया है। इसके अतिरिक्त कवि ने शिव भारत में भोसले इस उपनाम को संस्कृत में भृशबल' इस रूप में प्रयोग किया है। भोसले का संस्कृत रूपान्तर 'भृशबल' केवल शिवसमकालीन ग्रन्थों में ही प्राप्त होता है। उत्तरकालीन संस्कृत ग्रन्थों में यह रूप कहीं पर भी दिखाई नहीं देता है। इस प्रकार ये सब कवीन्द्र की शिव-समकालीनता को सिद्ध करने वाले प्रमाण हैं।

सम्पूर्ण शिवभारत ग्रन्थ में प्रत्येक प्रसंग के वर्णन में ग्रन्थकार की सूक्ष्म-दृष्टि व मार्मिकता सर्वत्र ही दृष्टिगोचर होती है। ये सब वर्णन कवि की व्यापक व कुशाग्र बुद्धि के परिचायक हैं। यदि कवि शिवसमकालीन नहीं होता तो किसी भी प्रसंग का इतना विस्तृत तथा मार्मिक वर्णन करने में समर्थ नहीं हो सकता था।

पन्हाला के बेड़े के पहले शक 1581 के पोषवद्य में कोल्हापुर के समीप रुस्तुमजमा व अफज़लखान का शिवाजी के साथ युद्ध हुआ था। इस युद्ध का वर्णन चौबीसवें अध्याय में है। इसमें दोनों ओर के सैन्य की किस प्रकार की योजना थी

इसका वर्णन सरदारों के नामों के साथ किया गया है तथा रूस्तुम के सैन्य के भंग होने के बाद वह महाराजके पास से कैसे भाग गया तथा महाराज ने उसको क्यों जाने दिया ? रोका क्यों नहीं ? इसकी ओर कवि ने अत्यन्त चतुराई से संकेत किया है । इसके अनुसार ही शिवाजी का कार्तलखान के साथ युद्ध हुआ । इसका वर्णन भी कवि की सूक्ष्म दृष्टि का परिचायक है ।

कार्तलखान का दूत शिवाजी से मिलने के लिए गया, तब घोड़े पर बैठे हुए लब्करी पोशाक पहने हुए शिवाजी उसको कैसे दिखाई दिए , इसका कवि ने अत्यधिक सजीव वर्णन किया है । उसी प्रकार अफ़ज़लखान से भेंट के समय शिवाजी के स्वरूप का जैसा वर्णन किया गया है उससे कवि की सूक्ष्मदृष्टि का पता चलता है। इन वर्णनों को पढ़ते समय ऐसा लगता है जैसे शिवाजी साक्षात हमारे समक्ष खड़े हों ।

अफ़ज़लखान के वध के बाद आदिलशाह अत्यधिक चिढ़ गया उसने दिल्लीराज से, शिवाजी को सदा के लिए समाप्त करने की इच्छा से, सहायता माँगी । उसकी यह माँग मुग़लों ने स्वीकार कर ली । औरंगज़ेब ने अपने मामा शाइस्ताखान को सेनापति बना कर भेजा तथा उसके साथ 77 हज़ार घुड़सवार, हाथी, पैदल, इत्यादि प्रचण्ड सैन्य दिया तथा दौलताबाद से महाराज के प्रदेश के लिए प्रस्थान किया । खान ने यहाँ आकर शिवाजी का सम्पूर्ण प्रदेश हस्तगत कर लिया । पूना, सूपा, सास्वड, चाकण, इन्दापुर इत्यादि सम्पूर्ण प्रान्त चले गए, पन्हाला भी छोड़ना पड़ा । ऐसी स्थिति आने पर शिवाजी को अत्यधिक दुःख हुआ वह राजगढ़ पर आए वहाँ उन्होंने सम्पूर्ण परिस्थिति का विचार करके आगे की नीति निश्चित करने के लिए सभा बुलाई तथा उस सभा में राजनीतिनिपुण व अर्थशास्त्र को जानने वाले मन्त्रियों को आमन्त्रित किया । सभा के आरम्भ में शिवाजी ने स्वयं ही भाषण किया । तथा सभा का उद्देश्य बताया और कहा आज हमारा सर्वस्व हरण हो गया। चाकण भी शत्रु ने ले लिया है उसको वापिस लेना अत्यधिक कठिन है । फिर भी हमें पहले उसी को वापिस लेना है । शत्रुनाश करना है तो उसके लिए मनुष्य बल होना

चाहिए तब हमें अधिक वेतन दे कर मनुष्य-बल बढ़ाना है, इसके लिए द्रव्य होना आवश्यक है । द्रव्य-बल के बिना यश-प्राप्ति सम्भव नहीं । तब सम्पूर्ण प्रान्तों से कर वसूल करना चाहिए । तब बाद में शत्रुनाश पर लगना चाहिए । इस प्रकार का राजनीतियुक्त कथन शिवाजी ने सभा के समक्ष रखा । तब मन्त्रि-मण्डल ने, दूसरे प्रदेश पर आक्रमण करके द्रव्यार्जन करना राजनीतिसम्मत है, ऐसा कहा । तथा सचिवों ने बताया कि शाइस्ताखान वाकण जीतकर पूना में रह रहा है । तथा महाराज रायगढ़ पर है यह बात उसको ज्ञात है वह अपनी सेना का प्रस्थान सह्याद्रि से करेगा ऐसा महाराज को बताया महाराज को भी यह बात ठीक लगी। इस घटना का वर्णन कवीन्द्र ने प्रस्तुत ग्रन्थ के अट्ठाईसवें अध्याय में किया है । यह सभा अनेक कारणों से अत्यधिक महत्व की है किन्तु इस सभा का वर्णन केवल कवीन्द्र ने ही किया है दूसरे किसी भी ग्रन्थ में इस सभा का उल्लेख नहीं मिलता है, किन्तु कवि ने इसका वर्णन किया है इससे यह सिद्ध होता है कि यह बात उसके समय की ही होनी चाहिए । यह सभा शक 1592 के पौष मास में महाराज के स्थान राजगढ़ में हुई थी, तथा दूसरे प्रदेश को जीतकर द्रव्यार्जन करना है, अपना प्रदेश वापिस लेना है । ये सब आगे की नीति सभा में निश्चित की गई ।

इस प्रकार शिवाजी किसी भी राजकार्य अथवा नीति को स्थापित करने से पहले अपने मन्त्रियों से सलाह अवश्य लेते थे । उनके मतानुसार ही अपनी नीति बदलने अथवा स्थापित करते थे । शिवशाही में एकतन्त्री कार्य नहीं था, बल्कि अनेक लोग एकत्र होकर ही किसी भी नीति को निश्चित करते थे ।

इसके अतिरिक्त एक और घटना काल को बताने वाली है । शक 1592 के फाल्गुन वद्य में महाराज ने राजापुर पर चढ़ाई करके उसको लूटा । इस चढ़ाई में उन्होंने सब विदेशी व्यापारियों से कर लिया । इसमें अंग्रेजों को अत्यधिक कठिनाई उठानी पड़ी । शिवाजी ने उनका भूमिगत धन भी खोद कर निकाल लिया । इसका वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है :

निक्षेपस्वर्णसम्पूर्णघटाहजठरां धराम् ।
खलान्तकः स म्लेच्छेरनेकैः समखानयत् ।[1]

यहीबात उस समय उपस्थित एक डच व्यापरी ने भी बताई है । अंग्रेजी भाषा के एक ही वाक्य में इस प्रकार कहा है :

'Their (of the English) office was entirely plundered but the floor was delved on all sides to find out all the treasures.'

(Degh- Register glhouden into casteel Batavia , Anno 1661 pages 215-216)

उपर्युक्त वर्णन में कवीन्द्र व डच व्यापारी में अत्यधिक साम्य है । अतः कवीन्द्र व शिवाजी का समकालीनत्व स्पष्ट ही है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में कवि के विषय में बहुत अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती किन्तु जो कुछ उपलब्ध है उसके आधार पर यह ज्ञात होता है कि कवीन्द्र परमानन्द महान शास्त्रज्ञ, अध्यात्मवेत्ता तथा मार्मिक पौराणिक पण्डित था कवि ने शिवभारत में पुराणविषयक ज्ञान का परिचय दिया है कवि ने प्रस्तुत ग्रन्थ को 'पुराणमिव नूतनम'[2] कहा है ।

इसके अतिरिक्त कवि ने बनारस में स्थित पण्डितों के मुख से प्रस्तुत ग्रन्थ को धर्मशास्त्र व अर्थशास्त्र से युक्त कहलवाया है ।[3] इससे स्पष्ट हो जाता है कि कवि को इन सब का पर्याप्त ज्ञान था । कवि को अर्थशास्त्र का पर्याप्त ज्ञान है ।

---

1. शिवभारत, अध्याय 30, श्लो० 6, पृ० 89
2. अध्याय 1, श्लो० 13 पृ० ।
3. अध्याय । श्लो० 13 , पृ० ।

राजा की आर्थिक नीति कैसी हो, वह यह भली भाँति जानता है । राजदरबार में रहने के कारण राजा की नीतियों, मन्त्रियों एवं सेवक वर्ग के व्यवहार एवं दायित्व का उसको भलीभाँति ज्ञान है । इसका वर्णन कवि ने बहुत ही सुन्दर ढंग से किया है । जब चाकण भी चला गया तब शिवाजी अपने मन्त्रियों को बुला कर कहते हैं कि अर्थ ही समर्थ है अत: द्रव्यार्जन करना है इत्यादि अनेक प्रकार की राजनीतियुक्त बातों को बताते हैं ।[1] इस प्रकार स्पष्ट है कि कवि अर्थशास्त्र व राजनीति का ज्ञाता है ।

कवि का ऐतिहासिक ज्ञान भी प्रशंसनीय है । ऐतिहासिक तथ्यों की प्रामाणिकता के आधार पर यह ग्रन्थ इतिहासानुरागियों में विशेष आदर का स्थान रखता है । इसमें कवि ने शिवाजी के पितामह मालोजीराज से लेकर शिवाजी के राज्यारोहण तक की घटनाओं का वर्णन किया है । जो कि इतिहाससम्मत ही है फिर भी इसमें कुछ वर्णनों में कवि अपने नायक के अवगुणों को गुणों में परिवर्तित करने के कारण तथा काव्य की दृष्टि से भी इसमें कल्पना का पुट अवश्य है । अर्थात् कवि ने कुछ वर्णन काल्पनिक भी किया है ।

इसके अतिरिक्त कवि ने शकुन-अपशकुन का भी सुन्दर वर्णन किया है उस समय स्थित समाज में किस प्रकार के अन्धविश्वास थे इसका परिचय देते हैं ।[2]

कवि को ज्योतिष विद्या में भी विश्वास है इसका वर्णन कवि ने प्रस्तुत ग्रन्थ में किया है ।[3] कवि का सामरिक ज्ञान भी प्रशंसनीय है । कवि ने न केवल सैनिक प्रयाण के यथावत वर्णन में युद्ध सम्बन्धी बातों का परिचय दिया है, अपितु युद्ध-क्षेत्र का भी रोमान्चकारी तथायथावत वर्णन किया है । इन दृश्यों को

---

1. अध्याय 23, श्लो0 36-42 , पृ0 82-33
2. शिवभारत, अध्याय 11, श्लो0 41-46 , पृ0 3
3. शिवभारत, अध्याय 17, श्लो0 59, पृ0 52

पढ़ने से यह अनुमान होने लगता है कि कवि को रणभूमि का प्रत्यक्ष अनुभव है । कवि का वर्णन इतना सजीव है कि ऐसा प्रतीत होता है जैसे युद्ध भूमि का दृश्य साक्षात देख रहे हैं ।

कवि के जीवन एवं बहुज्ञता पर विचार करने के बाद कवि की काव्य सम्बन्धी मान्यताओं पर विहंगम दृष्टि डाल लेना अनुचित न होगा ।

यद्यपि 'शिवभारत' में कवि ने महाकाव्य विषयक वस्तु ,शैली, रस वर्णन, उदाहरण, अलंकार, छन्द आदि का प्रयोग किया है, परन्तु फिर भी कवि प्रातिभ-चातुर्य के कारण भावों में स्वच्छन्द वातावरण को जन्म दे गया है । इसी-लिए वह अपने पूर्ववर्ती कालिदासादि कवियों की भाँति ही अपने काव्य को मौलि-कता एवं नवीनता से पूर्ण करने में समर्थ हुआ है । 'शिवभारत' में कवि ने वीर रस के साथ ही साथ रूप रस, वात्सल्य रस, तथा बीभत्स रस का भी सुन्दर प्रयोग किया है ।

कवि की वर्णन शैली प्रसादयुक्त तथा मनोवेधक है । जिसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं अध्याय 7 में शिवाजी की शिशुलीला का वर्णन तथाअध्याय उन्तीस में राजव्याघ्री का भाषण, अध्याय 30 में शिवाजी के स्वरूप का वर्णन तथा अध्याय 21 से तेइस तक युद्ध भूमि का जिस प्रकार का वर्णन किया गया है, वह देखते ही बनता है । इस ग्रन्थ में इसी प्रकार के अन्य अनेक वर्णन यत्र-तत्र देखने को मिलते हैं ।

कवि ने अलंकारों का भी स्वाभाविक रूप से प्रयोग किया है । इनमें अनुप्रास तथा यमक अलंकारों का अधिक प्रयोग है । इनके अतिरिक्त कवि ने श्लेष, विरोधाभास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति, विनयोक्ति, कारण-माला इत्यादि का भी प्रयोग किया है । इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि ने शब्दा-लंकार तथा अर्थालंकार दोनों का ही प्रयोग किया है ।

कवि ने जिन छन्दो का प्रयोग किया है उनमें अनुष्टुप मुख्य छन्द है । प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर छन्द परिवर्तन किया गया है । अनुष्टुप वृत्त के अतिरिक्त 'प्रहर्षिणी, शिखरिणी, मालिनी, मन्दाक्रान्ता, उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, रथोद्धता, इत्यादि छन्दों का प्रयोग हुआ है । केवल बत्तीसवें अध्याय में त्रियो-गिनी वृत्त का प्रयोग किया गया है जो कि रघुवंश के आठवें सर्ग का वृत्त है ।

इसके अतिरिक्त कवि ने अपने काव्य में जिन पात्रों को लिया है वे सभी ऐतिहासिक हैं । यद्यपि काव्य में कुछ कल्पना का पुट अवश्य है । कवि का मुख्य उद्देश्य तो शिवाजी के चरित्र को चित्रित करना है शिवाजी एक ऐतिहासिक व्यक्ति होने के कारण उनके साथ आए अन्य पात्र तथा घटनाएं ऐतिहासिक होना स्वाभाविक ही है । किन्तु शिवाजी के दरबारी कवि होने के कारण कहीं-2 कवि ने अपने नायक के दोषों को भी गुणों में परिवर्तित अवश्य किया है ।

यदि शिवभारत का काव्य की दृष्टि से समालोचन किया जाए तो ज्ञात होगा कि यह कितना महत्त्वपूर्ण है । भाषा प्रभुत्व, अपारशब्दसम्पत्ति, ओ-जस्वी व प्रसादयुक्त वर्णन शैली इत्यादि अलौकिक गुणों के कारण ही उसको कवीन्द्र पदवी से विभूषित किया गया जो कि सर्वथा उचित ही है ।

कवीन्द्र परमानन्द की रचनाएं

आज कवीन्द्र परमानन्द के नाम से केवल दो ग्रन्थ प्राप्त होते हैं।
§1§ शिवभारत §2§ परमानन्दकाव्य ।

शिवभारत

तन्जौर सरस्वती महल ग्रन्थालय में उपलब्ध पाण्डुलिपि के आधार पर यह ग्रन्थ प्रकाशित किया गया । पूना से 1927 में मराठी अनुवाद के साथ एस० एम० दिवेकर ने प्रकाशित कराया । इसकी विस्तृत मराठी प्रस्तावना में शिवाजी के

चरित्र का महत्व बताकर , जैसे भारत के आधार पर विस्तृत महाभारत की रचना हुई उसी प्रकार शिवभारत के आधार पर विस्तृत शिवचरित्र की रचना की जा सकती है ऐसा अभिप्राय व्यक्त किया है । इस प्रस्तावना में शिवाजी के चरित्र के अन्य साधनों के साथ शिवभारत की तुलना भी की गई है । लेकिन पूरा शिवभारत कैसे हो सकता है तथा साहित्यिक दृष्टया उसका क्या महत्व हो सकता है ? इन बातों का प्रस्तावना में विचार नहीं किया गया है । सर जदुनाथ सरकार तो इसके 'शिवभारत' शीर्षक से ही सहमत नहीं हैं उनके अनुसार इसका वास्तविक नाम 'सूर्य-वंशम्' था {कालिदास के रघुवंश के आधार पर} किन्तु दिवेकर ने इसको 'शिवभारत नामक शीर्षक केअन्तर्गत प्रकाशित किया जो सरकार के अनुसार गलत है ।

आनन्दाश्रम संस्था से 1930 में शिवभारत का दूसरा संस्करण पूना से प्रकाशित हुआ । इसके लिए एक अधिक पाण्डुलिपि का प्रयोग किया गया जो कि अत्यन्त प्राचीन है । सम्भवत: ग्रन्थकार की समकालीन भी हो सकती है । यह प्रकाशकों का अभिप्राय है । प्रकाशकों ने अपने निवेदन में तथा प्रस्तावनाकार सदाशिव भिडे ने शिवाजी के गौरव पर विस्तार से लिखा है । शिवभारत के इन दोनों संस्करणों में केवल इकत्तीस अध्याय पूर्ण हैं तथा बत्तीसवां अपूर्ण है इसके केवल नौ श्लोक ही प्राप्त होते हैं । तथा अध्याय के अन्त में ग्रन्थ समाप्ति की कोई सूचना भी नहीं है । इसमें कुल मिला कर दो हज़ार दो सौ बासठ श्लोक हैं । श्लोकों की संख्या अध्यायानुसार इस प्रकार है :

अध्याय	श्लोक संख्या	अध्याय	श्लोक संख्या
1	92	2	68
3	57	4	68
5	60	6	96
7	37	8	73
9	74	10	45

अध्याय	श्लोक संख्या	अध्याय	श्लोक संख्या
11	49	12	119
13	130	14	107
15	53	16	65
17	76	18	65
19	44	20	65
21	86	22	72
23	72	24	78
25	67	26	78
27	52	28	92
29	89	30	51
31	73	32	9
			2262

प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर 'इत्यनुपुराणे सूर्यवंशे निवासकरपरमानन्द कवीन्द्र-प्रकाशितायामध्याय शतसंमितायां वेयासिक्यां संहितायां ..... अध्याय : ।"

इन पंक्तियों का प्रयोग हुआ है किन्तु बत्तीसवें अध्याय में इन पंक्तियों का प्रयोग नहीं है । तथा नौ श्लोकों के बाद ही ग्रन्थ समाप्त हो जाता है । इस ग्रन्थ की अब तक जो हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, उनमें भी केवल इतना ही ग्रन्थ प्राप्त होता है । इससे आगे की कोई भी सूचना प्राप्त नहीं होती, किन्तु जो ग्रन्थ आज हमारे समक्ष है उसका अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि यदि यह ग्रन्थ पूर्ण होता तो अवश्यमेव महाभारत के समान विशाल होता ।

कवि ने अपने ग्रन्थ को 'अनुपुराण' इस प्रकार का नाम दिया है तो यह अनुचित प्रतीत नहीं होता, क्योंकि कवि ने महाभारत के समान ही इसमें शिवाजी जैसे तेजस्वी व अवतार लेने वाली विभूति का चरित्र ग्रन्थ लिखा है, जिसमें महाभारत के समान ही विविध विषयों व प्रसंगों का वर्णन हुआ है । तथा राजनीति जैसे गहन विषय का भी जिसमें अन्तर्भाव है ऐसे शिवभारत ग्रन्थ का समावेश रामायण, महाभारत आदि महापुराणों की पंक्ति में होना ही चाहिए । यह कवि की उत्कृष्ट अभिलाषा है । पुराण व उपपुराण की संख्या निश्चित है तभी तो कवि ने इसको उन्नीसवां पुराण कहा है तथा कवि ने अपनी कृति को 'अनुपुराण' यह नाम दिया है । ऐसा प्रतीत होता है कवि ने इस ग्रन्थ को काशी में रहने वाले पण्डितों के मुंह से 'पुराणमिव नूतनम्'[1] इस प्रकार कहलवाया है ।

उस समय क्षत्रियों का लोप हो गया था तथा वे अस्तित्व में नहीं थे । इस प्रकार की जो बात आई है वह कवि को मान्य नहीं है । कवि को तो मराठों का क्षत्रियत्व व भोंसलों का सूर्यवंशीयत्व ये पूरी तरह से मान्य हैं । कवि ने यही बात कही है :

तं सूर्यवंशमनघं कथ्यमानं मयादितः ।
सर्वेऽप्यवहितात्मानः शृणुध्वं श्रृण्वतां वराः ॥ 41
दक्षिणस्यां दिशिश्रीमान्मालवर्मा नरेश्वरः ।
बभूव वंशे सूर्यस्य स्वयं सूर्य इवौजसा ॥ 42[2]

यह कथानक के आरम्भ के ही श्लोकों में स्पष्ट व्यक्त किया है जिसके प्रमाण में शिव अवतार की कथा अध्याय पाँच में दी गई है । पृथ्वी म्लेच्छों के छल से अत्यधिक पीड़ित हो कर ब्रह्मा की शरण में जाकर प्रार्थना करती हुई इस प्रकार कहती है :

---

1. अध्याय 1, श्लोक 13, पृ0 1
2. अध्याय 1, श्लोक 41-42 , पृ0 2

उत्थाप्य स्थापिता: केचित केचित् युद्ध निपातिता: ।
कलिभिस्तैस्तन: प्राय: क्षत्रिया: क्षीणतां गता: । 3।
. ... व्रजन्ति क्षत्रिया: क्षयम् ।
....................................। 43[1]

इससे स्पष्ट होता है कि उस समय राष्ट्र में क्षत्रिय नहीं के बराबर थे । कवि का तात्पर्य यह नहीं है कि क्षत्रिय पूर्ण रूप से नष्ट हो गए थे अपितु नष्ट होने के रास्ते पर लग गए थे । वैसे क्षत्रियों का अस्तित्व तो था तभी तो राज्यारोहण के समय महाराज को क्षत्रियोचित संस्कार करना पड़ा ।

कवि ने अध्याय एक से लेकर इकत्तीसवें अध्याय की समाप्ति में 'शतसंमितायां संहितायां' इस शब्द समास का प्रयोग किया है । कवि ने ग्रन्थ का नाम शिवभारत रखा है तथा उसका निर्माण महाभारत जैसा किया है । शिवभारत को कवि ने शिवाजी की आज्ञा से तैयार किया, किन्तु वह {कवि} काशीस्थ पण्डितों के समक्ष बोला इसी कारण कवीन्द्र वक्ता व काशी के पण्डित श्रोता हुए । पण्डितों के द्वारा शंका व प्रश्न पूछे गए और परमानन्द ने उनको उत्तर में ऐतिहासिक जानकारी दी ऐसी प्रत्येक प्रसंग की पद्धति है ।

इसके अतिरिक्त कवि ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही शिवचरित्र को भारत के समान विशाल कहा है ।[2] इससे ऐसा प्रतीत होता है कि शिवभारत ग्रन्थ महाभारत के समान विशाल व सर्वांगसुन्दर रहा होगा । इस ग्रन्थ के आरम्भ में ही अध्याय एक के श्लोक छत्तीस से इकतालीस के बीच में यह बताया है कि इस ग्रन्थ

---

1. अध्याय 5, श्लोक 31-43 , पृ० 14

2. चरितं शिवराजस्य भरतस्येव भारतम् ।
अध्याय 1, श्लोक 22, पृ० 2

में कौन-कौन सी बातें व प्रसंग समाविष्ट हैं ।[1]

अफ़ज़लखान का वध शक 1581 में मार्गशीर्ष शुद्ध सप्तमी गुरूवार के दिन हुआ तथा शक 1583 वैशाख शुद्ध 11 सोमवार को महाराज ने श्रृंगारपुर हस्तगत किया । इस प्रकार सत्रह महीनों के प्रसंगों का वर्णन अध्याय इक्कीस से बत्तीस तक अर्थात् बारह अध्यायों में किया है । तथा इन बारह अध्यायों की श्लोक-संख्या आठ सौ उन्नीस है । इसके आधार पर ग्रन्थ की विशालता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है ।

---

1. यत्राऽस्ते महिमा शंभोर्महादेवस्य वर्णित: ।
दुर्वृतासुरमर्दिन्यास्तुलजायास्तथैव च ॥ 36
धर्मस्यार्थस्य कामस्य मोक्षस्य च यथायथम् ।
तीर्थानामपि महात्म्यं यत्र सम्यक्निरूपितम् ॥ 37
यत्रयुद्धान्यनेकानि शिवस्य भवने: सह ।
तेषामेव विनाशार्थमवतीर्णस्य भूतले ॥ 38
देवानां ब्राह्मणानां च गवां च महिमाधिकम् ।
पवित्राणि विचित्राणि चरित्राणि च भूभुजाम् ॥ 39
गजानां तुरगाणां च दुर्गाणां लक्षणानि च ।
निरूपितान्यशेषेण राजनीतिश्च शाश्वती ॥ 40
तं सूर्यवंशमनघं कथ्यमानं मयाऽदित: ।
सर्वोऽप्यवहितात्मन: शृणुध्वं शृण्वतां वरा : ॥ 41
अध्याय 1 , श्लोक 36-41 , पृ0 21

इस ग्रन्थ में मालोजी से लेकर शिवाजी के शृंगारपुर हस्तगत करने तक की घटनाओं का वर्णन है अर्थात् इसमें लगभग 1530 से लेकर 1661 तक (लगभग 130 वर्ष का समय) का वर्णन मिलता है ।

शिवभारत के अतिरिक्त एक और ग्रन्थ (परमानन्दकाव्य) कवीन्द्र के नाम से प्राप्त होता है । इस काव्य को "बड़ोदा ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट" इस संस्था से 1952 में गो० स० सरदेसाई ने प्रकाशित किया ।

सर जदुनाथ सरकार के अनुसार 'परमानन्द काव्य' शिवभारतकार कवीन्द्र परमानन्द द्वारा रचित काव्य है : किन्तु अम्बक शंकर शेजवलकर ने इसको परमानन्द कृत नहीं अपितु उसके पुत्र तथा पौत्रों द्वारा रचित माना है । वस्तुतः सम्पूर्ण काव्य का अध्ययन करने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि यह काव्य कवीन्द्र परमानंद कृत हो ही नहीं सकता इसलिए हम सरकार के इस मत से सहमत नहीं हैं । हमें तो शेजवलकर का मत मान्य है ।

संभाजी की रिगासत में देवदत्त नाम के परमानंद के धूर्त पुत्र ने अपना इष्ट हेतु सिद्ध करने के लिए शिवाजी के चरित्र का भी कुछ अंश त्रुटित रूप में जैसे तैसे लिख दिया । इसी देवदत्त का पुत्र गोविन्दशाह महाराज की इच्छा पूर्ण करने के लिए रामजन्म जैसे शाहू महाराज के जन्म का आख्यानक पुत्र कामेष्टि याग के साथ लिखने में लग गया। यह गोविंद भी स्वयं को कवीन्द्र कहता है । इससे ऐसा प्रतीत होता है कि इन्होंने इस पद का प्रयोग कुल नाम के रूप में किया है ।

श्री पाठे ने मुद्रित पुस्तक के ग्रन्थ कर्तृत्व के विषय में तर्कयुक्तिक निष्कर्ष निकाला है । उनके अनुसार मुद्रित प्रकरणों के कम से कम चार प्रणेता रहे होंगे , तीन तो थे ही । किन्तु ये सब सम्भानी व उसका बेटा शाहु इनके आश्रित स्तुतिपाठक हैं । काव्य में अतिशयोक्ति अलंकार माना जाता है । परन्तु परमानन्द काव्य में जो स्तुति पाठ मिलता है वह ऐतिहासिक सत्य से दूर होने के कारण उसकी तुलना

जो भाटों द्वारा किए जाने वाले स्तुतिपाठ से ही हो सकती है, किन्तु खोज करने पर इसमें सत्य का कुछ अंश निकाला जा सकता है क्योंकि समकालीन व्यक्तियों द्वारा सुनी हुई तथा देखी हुई कुछ घटनाएं इसमें वर्णित हैं ।

देवदत्त तथा उसका पुत्र दोनों ही छत्रपति की राजधानी परिसर में रहते थे अत: इतिहास में अन्यत्र न दी गई हकीकत इनके काव्य में मिलना स्वाभाविक ही है ।

इस मुद्रित काव्य के सम्पादक ने पाँच भाग बताए हैं । वस्तुत: ये तीन ही होने चाहिए थे । मुद्रित भागों में संदर्भ-रहित चार भाग आगे पीछे हो गए हैं । उनके पृष्ठ ठीक जोड़ने से काव्य सुसंगत बन जाता है । सम्पादक ने पृष्ठों को ठीक से जोड़ने का भी प्रयत्न नहीं किया और जैसा हस्तलिखित मिला वैसा ही बिना संदर्भ के मुद्रित कर दिया । पृष्ठों को उचित रूप से जोड़ने पर काव्य के तीन ही भाग दृष्टिगत होते हैं ।

प्रारम्भ के इक्कीस पृष्ठों में भौंसले कुल की काव्यमय प्रशस्ति है । यह लम्बे वृत्तों में है । तथा आरम्भ से अन्त तक कहीं पर भी नाम न होने से इसके लेखक के विषय में कुछ भी जानकारी प्राप्त नहीं होती फिर भी परमानन्द के पुत्रों में से ही कोई होगा ऐसा कहा जा सकता है ।

ये श्लोक रसहीन है तथा इनमें शाहजी, शिवाजी और संभाजी इनकी राजकीय प्रशस्ति की गई है । फिर भी इस छोटे लेखन में जो अन्य दो भागों में पाया जाता है वह संभाजी का पक्षपात, उसके हर्षामर्ष, शाक्तपंथ की श्रेष्ठता । इस पन्थ को स्वीकार करने से ही संभाजी को अशक्य प्राय: राज्य प्राप्ति, इसके लिए आवश्यक शिवाजी की मृत्यु ये सब कुछ पाया जाता है । इस पन्थ का गुरू छान्दोग्यामात्य कवि कलश ही था उसी ने संभाजी को पूर्णाभिषिक्त बना कर शाक्त कलषाभिषेक के लिए प्रवृत्त किया ।

काव्य के तीन पृष्ठों में शाह जी का, चार पृष्ठों में शिवाजी का तथा शेष पृष्ठों में संभाजी का वर्णन प्राप्त होता है । काव्य में शाहजहाँ अकबर के ईरान जाने का भी वर्णन है । संभाजी के चरित्र के अन्तिम दो वर्षों का वर्णन न होने से यह माना जा सकता है कि यह काव्य संभाजी के जीवन-काल में ही उसके समक्ष रखा गया था ।

दूसरा भागपरमानन्द-पुत्र देवदत्त कृत है । इसमें अनेक स्थानों पर पिता का नाम रख कर देवदत्त ने स्वयं का नाम नहीं दिया है । इसमें शिवाजी के जीवन के अन्तिम चार वर्षों का वर्णन किया गया है, किन्तु यह वर्णन पाठकों को असत्य लगेगा ऐसा देवदत्त को स्वयं ही सन्देह हो गया था इसलिए उसने पहले ही बता दिया है कि सभी लोगों के शरीरों में शंकर के आशीर्वाद से कलि का संचार हो गया है । आरम्भ से ही कवि ने संभाजी का पक्षपात दिखाते हुए उसको सर्वगुण सम्पन्न, निर्दोष सरल , उदार तथा सर्वथा शिवाजी के राज्य के लिए उचित उत्तराधिकारी माना है ।

सोयराबाई को कलि की दूती तथा राक्षसी तथा स्वार्थी माना है। शिवाजी के प्रधानों को भी दैवी, स्वार्थी तथा प्रजावञ्चक दिखाया गया है । केवल संभाजी की बुद्धि कलि ने दूषित नहीं की है । स्वाभिमान की रक्षा के लिए तथा शौर्य प्रदर्शित करने के लिए वह मुगलों के पास गया । शिवाजी तथा उसके दुष्ट सलाहकारों ने उसको इस आपत्ति में डाला । संभाजी का इसमें कोई बुरा हेतु नहीं । संभाजी के दोषों का कहीं नामाल्लेख भी प्राप्त नहीं होता ।

पिता के शिवभारत का ही यह भाग है ऐसा आभास निर्माण करने के लिए कवीन्द्र तथा मनीषी इनके प्रश्नोत्तर भी बीच - बीच में रखे गए हैं । कलि देवी, शाह जी, शिवाजी, संभाजी इत्यादि पात्रों के द्वारा काव्य का अर्थ पाठकों के लिए स्पष्ट किया गया है किन्तु इतना करने के बाद भी कवि का हेतु सिद्ध नहीं हुआ है ।

कृति की रचना क्लिष्ट है तथा भाषा प्रवाही नहीं है । काव्य में परिचित शब्दों को छोड़कर शब्दकोष में ही मिलने वाले अपरिचित शब्दों का प्रयोग किया गया है । शब्द-रचना इस प्रकार की गई है कि अर्थ तुरन्त ध्यान में नहीं आता है । उसको खोजना पड़ता है ।

इस प्रकार परमानन्द काव्य शिवभारत का शेष भाग तो हो ही नहीं सकता, अपितु परमानन्द-विरचित श्लोक भी उसमें कम ही हो सकते हैं । कवीन्द्र परमानन्द- विरचित शिवभारत आज अधूरा ही मिलता है । सम्पूर्ण रूप में यह अवश्य ही बहुत विस्तृत होगा । इस संदर्भ में दो पक्ष सामने आते हैं - या तो किसी कारणवश कृति ही इस काव्य को पूर्ण नहीं कर सका या कवि ने तो पूरा किया था, किन्तु काल के उदर में वह नष्ट हो गया । कम से कम लेखक का विचार तो पूरा ही काव्य लिखने का था और उसने पूरा विस्तृत काव्य लिखा भी होगा कहीं उसका हस्तलिखित प्राप्त भी हो सकता है । या यह भी हो सकता है कि मूल हस्तलिखित की प्रतियाँ बनने से पहले ही वह किसी कारणवश आधे से अधिक नष्ट हो गया और जो शेष रहा उसकी की प्रतियाँ बनीं तथा वही आज हमें उपलब्ध होती हैं । जो भाग उपलब्ध है उसी से काव्य की श्रेष्ठता का अनुमान किया जा सकता है । परमानन्द काव्य में शिवाजी के चरित्र के अन्तिम भाग का जो वर्णन मिलता है उसको शिवभारत का भाग नहीं माना जा सकता । वह परमानन्द द्वारा लिखा हुआ भी प्रतीत नहीं होता है । शेष परमानन्द काव्य तो अनेक कवियों की कृतियों का अव्यवस्थित संग्रह मात्र लगता है । 'परमानन्द काव्य' यह नाम भी भ्रामक है तथा सम्पादक द्वारा कल्पित ही है ऐसा प्रतीत होता है । इसलिए अपूर्ण उपलब्ध शिवभारत का ही परामर्श इस प्रबन्ध में किया जायेगा ।

इस ग्रन्थ के नाम के विषय में भी विद्वानों में मतभेद हैं । शिवभारत के अतिरिक्त 'सूर्यवंश' तथा 'अनुपुराण' इस काव्य के नाम बताए गए हैं । जदुनाथ सरकार के अनुसार कालिदास के रघुवंश का अनुकरण करते हुए कवि ने अपने काव्य का

नाम 'सूर्यवंश' रखा तथा माल वर्मा से लेकर छत्रपति शाहू तक भोसले वंश के राजाओं का वर्णन इस काव्य में किया है । अध्याय समाप्ति में यह नाम पाया जाता है । रियासतकार गो. स. सरदेसाई ने इध्याय-समाप्ति वाक्य को ही प्रमाण मानते हुए इस ग्रन्थ का नाम 'अनुपुराण' माना है । इन दोनों का सम्पादकों पर यह आक्षेप है कि उन्होंने अपना कल्पना से इस काव्य को 'शिवभारत' नाम दे रखा है, किन्तु यह आरोप वास्तविक नहीं है । इस काव्य की पाण्डुलिपि मे ही शिवभारत नाम पाया जाता है । काव्य में भी शिवाजी का यह भारत के समान विस्तृत चरित्र है, यह बताया गया है । इसी को प्राधान्य देते हुए शिवभारत नाम को ही हमने उचित माना है । उपलब्ध शिवभारत का आलोचनात्मक अध्ययन ही इस ग्रन्थ का विषय है ।

=xxx=